**ओ३म्**

**आर्यसमाज के 141 वें स्थापनादिवस 10 अप्रैल, 2016 पर**

**‘आर्यसमाज का देश की धार्मिक, सामाजिक, शिक्षा व**

 **स्वतन्त्रता सहित सभी क्षेत्रों में प्रमुख योगदान’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

विश्व में अनेक धार्मिक व सामाजिक संगठन हैं जिनमें आर्यसमाज एक प्रमुख व अग्रणीय संगठन है। यदि इतिहास व अवधि के आधार पर देखें तो आर्यसमाज अन्य संगठनों की तुलना में अर्वाचीन है। आर्यसमाज की स्थापना 141 वर्ष पूर्व गुजरात के टंकारा नामक एक स्थान पर जन्में स्वामी दयानन्द सरस्वती (1825-1883) ने की थी। गुजराती होकर भी राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत व संस्कृत व हिन्दी की विशेषताओं व श्रेष्ठता के कारण उन्होंने इन भाषाओं को अपनाया था। उनके जीवन की प्रमुख विशेषता यह थी कि वह किसी भी धार्मिक मान्यता व सिद्धान्त को परम्परा के आधार पर सत्य स्वीकार न कर तर्क व ऊहा से उसका विश्लेषण व समीक्षा कर सत्य होने पर ही उसे स्वीकार करते थे। वह सृष्टि के इतिहास व आधुनिक काल में सत्य के सबसे बड़े अन्वेषक व पोषक थे। सत्य के अन्वेषण व सत्य धर्म के निर्धारण के लिए ही उन्होंने 21 वर्ष की अवस्था में अपने माता-पिता के घर का त्याग कर कठोर तप का जीवन व्यतीत किया। इसके बाद वह देश के अनेक स्थानों पर गये और सभी छोटे बड़े धार्मिक विद्वानों और योगियों के सम्पर्क में आये और उनकी संगति कर उनसे ज्ञान व योग विद्या को प्राप्त किया। अपनी आयु के 35 वर्ष व्यतीत हो जाने पर वह योग विद्या में तो निपुण हो गये थे जो उन्हें मोक्ष प्रदान कराने में सहायक थी परन्तु सत्य धर्म का निर्धारण वह अभी तक नहीं कर सके थे। विद्या प्राप्ति की चाह उनमें अब भी विद्यमान थी। उन्हें पता चला कि मथुरा में एक योग्य प्रज्ञाचक्षु विद्वान दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती रहते हैं जो विद्यार्थियों को अध्ययन कराते हैं। अतः वह सन् 1860 के आरम्भ वा मध्य में उनके पास मथुरा पहुंच गये और विद्यादान देने की उनसे प्रार्थना की। गुरुजी को सहमत करने व उनकी शर्तों को मानकर व पूरा कर वह उनके शिष्य बन गये और लगभग 3 वर्ष में उन्होंने धर्म व संस्कृति सहित वेद तथा वैदिक साहित्य के सिद्धान्तों सहित सत्य व असत्य का ज्ञान प्राप्त कर लिया। धर्म, संस्कृति व संस्कृत का अपूर्व विद्वान बनकर उन्होंने अपने विद्यागुरु की प्ररेणा से सृष्टि की आदि में ईश्वर प्रदत्त ज्ञान चार वेदों की मान्यताओं, शिक्षा व सिद्धान्तों के प्रचार को अपने जीवन का उद्देश्य बनाया और आगरा से आरम्भ कर देश के अनेक स्थानों पर जाकर उपदेश, व्याख्यान, वार्तालाप, चर्चा व शास्त्रार्थ आदि के द्वारा धुंआधार प्रचार एवं असत्य का खण्डन व सत्य का मण्डन किया। इसके साथ ही उन्होंने अपने भक्तों वा श्रद्धालुओं की प्रेरणा व स्ववात्मप्रेरणा से भी सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि तथा आर्याभिविनय सहित वेद-भाष्य एवं अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया। सम्प्रति उनके सभी ग्रन्थों सहित अनेक खण्डों में उनका पत्रव्यवहार तथा अनेक विद्वानों द्वारा रचित उनके खोजपुर्ण जीवन चरित्र सहित उन पर व्यापक साहित्य उपलब्ध है जो धार्मिक व साहित्यिक जगत की अनमोल निधि व पंूजी है। धार्मिक जगत में स्वामी दयानन्द द्वारा जितने तर्कपूर्ण सैद्धान्तिक व सामाजिक नियमों एवं परम्पराओं पर आधारित ग्रन्थों का सृजन किया है उतना उनके समानधर्मी किसी मतप्रवर्तक ने नहीं किया। इस दृष्टि से भी स्वामी दयानन्द, उनका स्थापित आर्यसमाज और उसका साहित्य सम्भवतः विश्व में सर्वोपरि स्थान रखता है।

 महर्षि दयानन्द का प्रमुख योगदान धर्म-मत-मतान्तरों में विद्यमान मिथ्या विश्वासों की ओर देशवासियों सहित पूरे विश्व के लोगों का ध्यान आकर्षित करना था। उन्होंने न केवल मिथ्या विश्वासों, असत्य व पाखण्ड, ढ़ोग व कुरीतियों की ओर ही लोगों का ध्यान आकर्षित किया अपितु लोगों को इनके विकल्प के रूप में सत्य पर आधारित समाधान भी प्रस्तुत किए। सभी मतों में, किसी में अधिक और किसी में कुछ कम, मूर्तिपूजा विद्यमान है। इस मूर्तिपूजा के दोषों से स्वामी दयानन्द जी ने देश व समाज को परिचित कराया और बताया कि मूर्तिपूजा ईश्वर की प्राप्ति में सीढ़ी नहीं अपितु एक खाई सिद्ध होती है जिसमें गिर कर मूर्तिपूजक सदा-सदा के लिए अपना अस्तित्व खो देता है। स्वामी दयानन्द जी ने ईश्वर की सच्ची पूजा वा उपासना की विधि लोगों को बताई जिसको करके मनुष्य अपने जीवन के सम्पूर्ण दुर्गुण, दुव्र्यस्न व दुःखों को दूर कर सकता है और धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है। महर्षि दयानन्द निर्दिष्ट ईश्वर निराकार, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, नित्य, अजन्मा, अविनाशी, सर्वप्रेरक, सर्वरक्षक, सब ऐश्वर्यों का स्वामी है जिसकी उपासना से मनुष्य के दुर्गुण, दुव्र्यस्न व दुःख आदि सभी दूर होते हैं। इसके अनेक उदाहरण हमारे सामने हैं जिनमें महर्षि दयानन्द सरस्वती व उनके अनेक शिष्यों सहित स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, रक्तसासक्षी पं. लेखराम, स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती आदि सम्मिलित हैं। यदि महर्षि दयानन्द न आते तो संसार के लोग ईश्वर की सच्ची स्तुति-प्रार्थना-उपासना से वंचित रहते। इसी क्रम में यह भी वर्णनीय है कि महर्षि दयानन्द ने धार्मिक जगत को ईश्वर, जीव व प्रकृति की नित्यता, अनवश्वरता, अनुत्पन्नता, अजर व अमरता का सिद्धान्त **‘‘त्रैतवाद सिद्धान्त”** दिया। ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप एवं संख्या की दृष्टि से एक है। जीव सत्य, चित्त, सूक्ष्म व एकदेशी है एवं संख्या की दृष्टि से असंख्य व अनन्त हैं। प्रकृति सत्व, रज व तम गुणों की साम्यावस्था है। प्रकृति जड़ है एवं ईश्वर के नियंत्रण में है। इस मूल प्रकृति से ही परमात्मा ने इस सृष्टि, ब्रह्माण्ड वा सूर्य, चन्द्र, पृथिवी आदि ग्रहों की उत्पत्ति की है व मनुष्य व अन्य प्राणियों के शरीर भी प्रकृति का ही विकार होकर ईश्वर के नियमों के अनुसार बने हैं। **महर्षि दयानन्द वा आर्यसमाज ने वेदों का पुनरुद्धार किया। संस्कृत व हिन्दी में उसके सरल व सुगम भाष्य उपलब्ध कराये। यह ऐसा कार्य है जो सृष्टि के आदि से अब तक हुआ हो, इसका प्रमाण नहीं है।**

 महाभारत के बाद ईसाईमत व ईस्लाम मत की स्थापना के बाद भारत में धर्मान्तरण आरम्भ हुआ जो महर्षि दयानन्द जी के आविर्भाव से पूर्व तक होता रहा। आज अविभाजित भारत में जितने ईसाई व मुसलिम बन्धु हैं वह प्रायः सभी धर्मान्तरित होकर इन मतों के अनुयायी बने हैं। इसका प्रमुख वैदिक सदधर्म को भुलाना, शिक्षा वा विद्या की अवनति व सामाजिक भेदभाव रहा है। महर्षि के कार्यक्षेत्र में आने के बाद उन्होंने पौराणिक व अन्य प्रचलित सभी मिथ्या मतों की पोल खोल दी और उनके प्रमुख अनुयायी पं. लेखराम जी व स्वामी श्रद्धानन्द जी सहित अनेक धर्मवीरों ने वैदिक धर्म की वेदी पर अपना बलिदान देकर हिन्दुओं के धर्मान्तरण को सीमित व नियंत्रित किया। यदि महर्षि दयानन्द का धार्मिक जगत में पदार्पण न हुआ होता तो आज हिन्दू व इसके विभिन्न समुदायों की जो संख्या है वह वर्तमान से निश्चित ही कम होती। यह खेद का विषय है कि हमारे पौराणिक भाईयों ने इतिहास की घटनाओं से कोई शिक्षा नहीं ली और आज भी इनकी सोच मध्यकालीन ही बनी हुई है जिससे इस हिन्दू वा आर्यजाति के अस्तित्व पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि आर्यसमाज भी अपने भीतर कलह से ग्रस्त है जिससे इसकी शक्ति नष्ट हुई है जो कि वेद को मानने वाले समुदायों के लिए शुभ संकेत नहीं है। आर्यसमाज में गुटबाजी का होना महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों की हत्या न सही इससे कुछ समता अवश्य रखता है।

 महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज ने हिन्दुओं में व्याप्त जन्मना जातिवाद पर कड़ा प्रहार किया और जातिवाद को निषिद्ध बताकर गुण-कर्म व स्वभाव पर आधारित वर्णव्यवस्था की वकालत की। छुआ-छूत सहित सभी प्रकार के सामाजिक भेदभाव, बालविवाह, अनमेल विवाह, मृतक श्राद्ध, फलित ज्योतिष आदि सभी सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार कर उन्हें दूर व नियन्त्रित किया। आर्यसमाज के आन्दोलन से जातिवाद का प्रभाव कम तो अवश्य हुआ परन्तु समाप्त नहीं हुआ जिसके अभिशाप सामने आते रहते हैं। ऐसा ही अभिशाप पिछले दिनों हरयाणा में जातिवाद पर आन्दोलन में देखने को मिला। आर्यसमाज ने न केवल जन्मना जातिवाद का विरोध किया अपितु गुण-कर्म-स्वभाव पर आधारित विवाहों को प्रोत्साहित व समर्थन दिया। इसका भी समाज में अनुकूल प्रभाव पड़ा है। जातिवाद समाप्त करने का यह एक बड़ा साधन बन गया है। **शिक्षा के प्रसार व वृद्धि तथा जन्मनाजाति की परम्परा के विरुद्ध अन्तर्जातीय विवाहों से हिन्दुसमाज में एक नए युग का सूत्रपात दिखाई दे रहा है जिसका श्रेय महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज को है। यदि आर्यसमाज की स्थापना न हुई होती तो यह लाभ हिन्दुजाति को न मिलता।**

 शिक्षा के क्षेत्र में भी आर्यसमाज ने क्रान्ति की है। संस्कृत का अध्ययन-अध्यापन नाम-मात्र को होता था। आर्यसमाज ने देश भर में जगह जगह सैकड़ों व हजारों गुरुकुल खोल कर आर्ष व्याकरण पाणिनी की अष्टाध्यायी, महर्षि पतंजलि के महाभाष्य व महर्षि यास्क के निरुक्त पर आधारित व्याकरण का अध्ययन-अध्यापन कराया जिससे संस्कृत व वैदिक साहित्य के अपूर्व विद्वानों ने जन्म लिया। दयानन्द जी के बाद पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती, पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, पं. युधिष्ठिर मीमांसक जी, डा. रामनाथ वेदालंकार जी आदि को हम इसमें ले सकते हैं। आज भी आर्यसमाज की विचारधारा से प्रभावित सहस्राधिक गुरुकुल देश में चल रहे हैं जिसने समाप्त हो रही संस्कृत भाषा को अमृतपान कराकर नया जीवन दिया। दयानन्द ऐंग्लोवैदिक कालेज की स्थापना भी महर्षि दयानन्द के अनुयायियों द्वारा की गई जिससे देश से अविद्या का अन्धकार दूर व कम हुआ। महर्षि दयानन्द से पूर्व वेदाध्ययन का अधिकार केवल जन्मना ब्राह्मण पुरुषों को ही था। महर्षि दयानन्द ने वेदों का प्रमाण देकर सभी वर्णों व मनुष्य समूहों सहित स्त्रियों व कन्याओं को भी वेदाध्ययन का अधिकार ही नहीं दिया अपितु आर्यसमाज में डा. प्रज्ञादेवी, मेधादेवी, डा. सूर्यादेवी, डा. सुमेधा, डा. सुकामा, डा. अन्नपूर्णा आदि महिलाओं ने वेदाध्ययन कर समाज में स्त्रियों की वैदिक शिक्षा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है व कर रही हैं। यह महर्षि दयानन्द व आर्यसमाज की देन हैं। **यदि आर्यसमाज न होता तो देश में कन्या व युवकों के वैदिक गुरुकुल न होते, न महिलायें यज्ञों की ब्रह्मा बन सकती, न यज्ञों में महिलाओं द्वारा वेदपाठ देखने को मिलता और न हि वेदविदुषी महिलायें होतीं जो आज हमें वैदिक काल की ऋषिकाओं की याद दिलाती हैं।**

 महर्षि दयानन्द के समय में देश अंग्रेजों का पराधीन था। महर्षि दयानन्द के ज्ञान के प्रचार व प्रसार आन्दोलन से देश को आजाद कराने की भावना का विकास करने में बल मिला। महर्षि दयानन्द के ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश, आर्याभिविनय, संस्कृतवाक्य प्रबोध व वेदभाष्य में स्वदेशी राज्य की उत्तमता व स्वतन्त्रता विषयक अनेक उद्धरण उपलब्ध होते हैं। **अंग्रेजों के राज्य में किसी भी दण्ड की परवाह न कर उन्होंने यहां तक लिख दिया था कि विदेशी लोगों का राज्य देशवासियों के पूर्ण सुखदायक कभी नहीं हो सकता। मनुष्य की परिभाषा करते हुए उन्होंने यह भी कहा कि मनुष्य वही है जो अन्यायकारी बलवान से भी न डरे। अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ, महाबलवान् और गुणवान् भी हो तथापि उस का नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करें। जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्याकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जायें, परन्तु इस मनुष्यपनरूप धर्म से पृथक कभी न होवे। महर्षि दयानन्द के यह शब्द दो अर्थों वाले हैं। इसमें अंग्रेजों को भी शामिल किया जा सकता है। सम्भव है उन्होंने इसमें अंग्रेजों को भी सम्मिलित किया हो?** महर्षि दयानन्द ने 1857 के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम में क्या भूमिका निभाई, इसका उल्लेख उन्होंने नहीं किया व वह कर भी नही सकते थे। फिर भी उनके साहित्य में देश प्रेम, अन्याय एवं गुलामी के प्रति जो विक्षोभ दिखाई देता है, उससे अनुमान लगाया जा सकता है कि उनका इस आन्दोलन में भी महत्वपूर्ण योगदान अवश्य रहा होगा। यह तो निश्चित है कि देश में आजादी का आन्दालेन आर्यसमाज की स्थापना के बाद ही चला। आजादी के आन्दोलन में लगभग 80 प्रतिशत लोग आर्यसमाज की विचारधारा से प्रभावित थे। क्रान्तिकारी आन्दोलन में भी महर्षि दयानन्द की विचारधारा का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। पं. श्यामजी कृष्ण वर्म्मा, लाला लाजपतराय, महादेव गोविन्द रानाडे, काकोरी के शहीद पं. रामप्रसाद बिस्मिल, भगतसिंह जी का परिवार व ऐसे अनेक योद्धा महर्षि दयानन्द व आर्यसमाज की ही देन थे। पटियाला के आर्यसमाज पर तो देशद्रोह का आरोप लगाकर उसके प्रायः सभी सदस्यों को बन्दी बना लिया गया था। अतः आर्यसमाज का स्वतन्त्रता आन्दोलन व प्राप्ति में भी प्रमुख योगदान है। यदि आर्यसमाज न होता तो आजादी का स्वरुप कहीं अधिक निराशाजनक हो सकता है।

लेख सामान्य आकार से बड़ा हो गया है। अभी बहुत कुछ लिखा जा सकता है परन्तु सीमा का ध्यान रखते हुए लेख को यहीं विराम देते हैं और भारतीय तिथि चैत्र शुक्ल पंचमी विक्रमी संवत् 1932 वा 10 अप्रैल, सन् 1875 को मुम्बई में प्रथम आर्यसमाज की स्थापना के अवसर पर महर्षि दयानन्द को सादर नमन कर उनका हार्दिक अभिनन्दन करते हैं। सभी पाठकों व देशवासियों को इस दिवस की हार्दिक शुभकामनायें एवं बधाई। देश के लोग आर्यसमाज की विचारधारा को जानकर अपने जीवन व आचरण में स्वहित में परिवर्तन करें, यह अभिलाषा एव अपेक्षा है।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**